शुद्धात्मशतक पद्यानुवाद

(हरिगीत)

परद्रव्य को परित्याग पाया ज्ञानमय निज आतमा।
शतबार उनको हो नमन निष्कर्म जो परमातमा।।१।।
परद्रव्य में रत बंधे और विरक्त शिवरमणी वरें।
जिनदेव का उपदेश बंध-अबंध का संक्षेप में।।२।।
परद्रव्य से हो दुर्गती निजद्रव्य से होती सुगति।
यह जानकर रति करो निज में अर करो पर से विरति।।३।।
नित नियम से निजद्रव्य में रत श्रमण सम्यकवंत हैं।
सम्यक्त्व परिणत श्रमण ही क्षय करें करमानन्त हैं।।४।।
किन्तु जो परद्रव्य रत वे श्रमण मिथ्यादृष्टि हैं।
मिथ्यात्व परिणत वे श्रमण दुष्टाष्ट कर्मों से बंधे।।५।।
जो आत्मा से भिन्न चित्ताचित्त एवं मिश्र हैं।
उन सर्वद्रव्यों को अरे परद्रव्य जिनवर ने कहा।।६।।
दुष्टाष्ट कर्मों से रहित जो ज्ञानविग्रह शुद्ध है।
वह नित्य अनुपम आतमा स्वद्रव्य जिनवर ने कहा।।७।।
निजद्रव्य रत यह आतमा ही योगि चारित्रवंत है।
यह ही बने परमातमा परमार्थनय का कथन यह।।८।।
परद्रव्य की पर्याय में उपजे ग्रहे ना परिणमे।
बहुभाँति पुद्गल कर्म को ज्ञानी पुरुष जाना करें।।९।।
परद्रव्य की पर्याय में उपजे ग्रहे ना परिणमें।
पुद्गल करम का नंतफल ज्ञानी पुरुष जाना करें।।१०।।
परद्रव्य की पर्याय में उपजे ग्रहे ना परिणमें।
बहुभाँति निज परिणाम सब ज्ञानी पुरुष जाना करें।।११।।

निज आतमा को शुद्ध अर पररूप पर को जानता।
है कौन बुध जो जगत में परद्रव्य को अपना कहे।।१२।।
बस आतमा ही आतमा का परीग्रह ह्न यह जानकर।
'परद्रव्य मेरा है' ह्न बताओ कौन बुध ऐसा कहे ?।।१३।।
यदि परीग्रह मेरा बने तो मैं अजीव बनूँ अरे।
पर मैं तो ज्ञायकभाव हूँ इसलिए पर मेरे नहीं।।१४।।
छिद जाय या ले जाय कोई अथवा प्रलय को प्राप्त हो।
जावे चला चाहे जहाँ पर परीग्रह मेरा नहीं।।१५।।
है अनिच्छुक अपरिग्रही ज्ञानी न चाहे धर्म को।
है परीग्रह ना धर्म का वह धर्म का ज्ञायक रहे।।१६।।
है अनिच्छुक अपरिग्रही ज्ञानी न चाहे अधर्म को।
है परिग्रह न अधर्म का वह अधर्म का ज्ञायक रहे।।१७।।
है अनिच्छुक अपरिग्रही ज्ञानी न चाहे असन को।
है परिग्रह न असन का वह असन का ज्ञायक रहे।।१८।।
है अनिच्छुक अपरिग्रही ज्ञानी न चाहे पेय को।
है परिग्रह न पेय का वह पेय का ज्ञायक रहे।।१९।।
इत्यादि विध-विध भाव जो ज्ञानी न चाहे सभी को।
सर्वत्र ही वह निरालंबी नियत ज्ञायकभाव है।।२०।।
उदयकर्मों के विविध-विध सूत्र में जिनवर कहे।
किन्तु वे मेरे नहीं मैं एक ज्ञायकभाव हूँ।।२१।।
पुद्गल करम है राग उसके उदय ये परिणाम हैं।
किन्तु ये मेरे नहीं मैं एक ज्ञायकभाव हूँ।।२२।।
अज्ञानमोहितमती बहुविध भाव से संयुक्त जिय।
अबद्ध एवं बद्ध पुद्गल द्रव्य को अपना कहें।।२३।।
सर्वज्ञ ने देखा सदा उपयोग लक्षण जीव यह।
पुद्गलमयी हो किसतरह किसतरह तू अपना कहे ?।।२४।।

जीवमय पुद्गल तथा पुद्गलमयी हो जीव जब।
ये मेरे पुद्गल द्रव्य हैं ह्न यह कहा जा सकता है तब।।२५।।
दूध-पानी की तरह सम्बन्ध इनका जानना।
उपयोगमय इस जीव के परमार्थ से ये हैं नहीं।।२६।।
पथिक लुटते देखकर पथ लुट रहा जगजन कहें।
पर पथ तो लुटता है नहीं बस पथिक ही लुटते रहें।।२७।।
उस ही तरह रंग देखकर जड़कर्म अर नोकर्म का।
जिनवर कहें व्यवहार से यह वर्ण है इस जीव का।।२८।।
इस ही तरह रस गंध तन संस्थान आदिक जीव के।
व्यवहार से हैं ह्न कहें वे जो जानते परमार्थ को।।२९।।
वर्णादिमय ही जीव है तुम यदी मानो इसतरह।
तब जीव और अजीव में अन्तर करोगे किसतरह ?।।३०।।
शुध जीव के रस गंध ना अर वर्ण ना स्पर्श ना।
यह देह ना जड़रूप ना संस्थान ना संहनन ना।।३१।।
ना राग है ना द्वेष है ना मोह है इस जीव के।
प्रत्यय नहीं है कर्म ना नोकर्म ना इस जीव के।।३२।।
ना वर्ग है ना वर्गणा अर कोई स्पर्धक नहीं।
अर नहीं है अनुभाग के अध्यात्म के स्थान भी।।३३।।
योग के स्थान नहिं अर बंध के स्थान ना।
उदय के स्थान नहिं अर मार्गणा स्थान ना।।३४।।
थितिबंध के स्थान नहिं संक्लेश के स्थान ना।
संयमलब्धि के स्थान ना सुविशुद्धि के स्थान ना।।३५।।
जीव के स्थान नहिं गुणथान के स्थान ना।
क्योंकि ये सब भाव पुद्गल द्रव्य के परिणाम हैं।।३६।।
हैं हेय ये परभाव सब ही क्योंकि ये परद्रव्य हैं।
आदेय अन्तस्तत्त्व आतम क्योंकि वह स्वद्रव्य है।।३७।।

चैतन्य गुणमय आतमा अव्यक्त अरस अरूप है।
जानो अलिंगग्रहण इसे यह अनिर्दिष्ट अशब्द है।।३८।।
मैं एक दर्शन-ज्ञानमय नित शुद्ध हूँ रूपी नहीं।
ये अन्य सब परद्रव्य किंचित् मात्र भी मेरे नहीं।।३९।।
मोहादि मेरे कुछ नहीं मैं एक हूँ उपयोगमय।
है मोह-निर्ममता यही वे कहें जो जाने समय।।४०।।
धर्मादि मेरे कुछ नहीं मैं एक हूँ उपयोगमय।
है धर्म-निर्ममता यही वे कहें जो जाने समय।।४१।।
ज्ञायकस्वभावी आतमा इसतरह ज्ञानी जानते।
निजतत्त्व को पहिचान कर कर्मोदयों को छोड़ते।।४२।।
सर्वज्ञ एवं सर्वदर्शी आतमा सिध शुद्ध है।
यह कहा जिनवर देव ने तुम स्वयं केवल ज्ञानमय।।४३।।
शास्त्र ज्ञान नहीं है क्योंकि शास्त्र कुछ जाने नहीं।
बस इसलिए ही शास्त्र अन्य रु ज्ञान अन्य श्रमण कहें।।४४।।
शब्द ज्ञान नहीं है क्योंकि शब्द कुछ जाने नहीं।
बस इसलिए ही शब्द अन्य रु ज्ञान अन्य श्रमण कहें।।४५।।
रूप ज्ञान नहीं है क्योंकि रूप कुछ जाने नहीं।
बस इसलिए ही रूप अन्य रु ज्ञान अन्य श्रमण कहें।।४६।।
वर्ण ज्ञान नहीं है क्योंकि वर्ण कुछ जाने नहीं।
बस इसलिए ही वर्ण अन्य रु ज्ञान अन्य श्रमण कहें।।४७।।
गंध ज्ञान नहीं है क्योंकि गंध कुछ जाने नहीं।
बस इसलिए ही गंध अन्य रु ज्ञान अन्य श्रमण कहें।।४८।।
रस ज्ञान नहीं है क्योंकि कुछ भी रस जाने नहीं।
बस इसलिए ही अन्य रस अरु ज्ञान अन्य श्रमण कहें।।४९।।
स्पर्श ज्ञान नहीं है क्योंकि स्पर्श कुछ जाने नहीं।
बस इसलिए ही स्पर्श अन्य रु ज्ञान अन्य श्रमण कहें।।५०।।

कर्म ज्ञान नहीं है क्योंकि कर्म कुछ जाने नहीं।
बस इसलिए ही कर्म अन्य रु ज्ञान अन्य श्रमण कहें।।५१।।
धर्म ज्ञान नहीं है क्योंकि धर्म कुछ जाने नहीं।
बस इसलिए ही धर्म अन्य रु ज्ञान अन्य श्रमण कहें।।५२।।
अधर्म ज्ञान नहीं है क्योंकि अधर्म कुछ जाने नहीं।
बस इसलिए ही अधर्म अन्य रु ज्ञान अन्य श्रमण कहें।।५३।।
काल ज्ञान नहीं है क्योंकि काल कुछ जाने नहीं।
बस इसलिए ही काल अन्य रु ज्ञान अन्य श्रमण कहें।।५४।।
आकाश ज्ञान नहीं है क्योंकि आकाश कुछ जाने नहीं।
बस इसलिए आकाश अन्य रु ज्ञान अन्य श्रमण कहें।।५५।।
अध्यवसान ज्ञान नहीं है क्योंकि वे अचेतन जिन कहे।
इसलिए अध्यवसान अन्य रु ज्ञान अन्य श्रमण कहें।।५६।।
नित्य जाने जीव बस इसलिए ज्ञायकभाव है।
है ज्ञान अव्यतिरिक्त ज्ञायकभाव से यह जानना।।५७।।
ज्ञान ही समदृष्टि संयम सूत्र पूर्वगतांग भी।
सद्धर्म और अधर्म दीक्षा ज्ञान है ह्न यह बुध कहें।।५८।।
इस ज्ञानगुण के बिना जन प्राप्ति न शिवपद की करें।
यदि चाहते हो मुक्त होना ज्ञान का आश्रय करो।।५९।।
इस ज्ञान में ही रत रहो सन्तुष्ट नित इसमें रहो।
बस तृप्त भी इसमें रहो तो परमसुख को प्राप्त हो।।६०।।
परमार्थ है है ज्ञानमय है समय शुद्ध मुनि केवली।
इसमें रहें थिर अचल जो निर्वाण पावें वे मुनि।।६१।।
निज आत्मा ही ज्ञान है दर्शन चरित भी आतमा।
अर योग संवर और प्रत्याख्यान भी आतमा।।६२।।
निर्ग्रंथ है नीराग है नि:शल्य है निर्दोष है।
निर्मान-मद यह आतमा निष्काम है निष्क्रोध है।।६३।।

निर्दण्ड है निर्द्वन्द है यह निरालम्बी आतमा।
निर्देह है निर्मूढ है निर्भयी निर्मम आतमा।।६४।।
ज्ञानी विचारें इसतरह यह चिन्तवन उनका सदा।
केवल्यदर्शन-ज्ञान-सुख-शक्तिस्वभावी हूँ सदा।।६५।।
ज्ञानी विचारें देखे-जाने जो सभी को मैं वही।
जो ना ग्रहे परभाव को निज भाव को छोड़े नहीं।।६६।।
गुण आठ से हैं अलंकृत अर जन्म-मरण-जरा नहीं।
हैं सिद्ध जैसे जीव त्यों भवलीन संसारी वही।।६७।।
शुद्ध अविनाशी अतीन्द्रिय अदेह निर्मल सिद्ध ज्यों।
लोकाग्र में जैसे विराजे जीव हैं भवलीन त्यों।।६८।।
कर्म से आबद्ध जिय यह कथन है व्यवहार का।
पर कर्म से ना बद्ध जिय यह कथन है परमार्थ का।।६९।।
अबद्ध है या वद्ध है पर यह सभी नयपक्ष हैं।
नयपक्ष से अतिक्रान्त जो वह ही समय का सार है।।७०।।
जिस भाँति प्रज्ञा छैनी से पर से विभक्त किया इसे।
उस भाँति प्रज्ञा छैनी से ही अरे ग्रहण करो इसे।।७१।।
इस भाँति प्रज्ञा ग्रहे कि मैं हूँ वही जो चेतता।
अवशेष जो हैं भाव वे मेरे नहीं यह जानना।।७२।।
इस भाँति प्रज्ञा ग्रहे कि मैं हूँ वही जो देखता।
अवशेष जो हैं भाव वे मेरे नहीं यह जानना।।७३।।
इस भाँति प्रज्ञा ग्रहे कि मैं हूँ वही जो जानता।
अवशेष जो हैं भाव वे मेरे नहीं यह जानना।।७४।।
जो सो रहा व्यवहार में वह जागता निज कार्य में।
जो जागता व्यवहार में वह सो रहा निज कार्य में।।७५।।
व्यवहार से यह आत्मा घट पट रथादिक द्रव्य का।
इन्द्रियों का कर्म का नोकर्म का कर्ता कहा।।७६।।

परद्रव्यमय हो जाय यदि परद्रव्य में कुछ भी करे।
परद्रव्यमय होता नहीं बस इसलिए कर्ता नहीं।।७७।।
ना घट करे ना पट करे ना अन्य द्रव्यों को करे।
कर्ता कहा तत्रूप परिणत योग अर उपयोग का।।७८।।
ज्ञानावरण आदिक जु पुद्गल द्रव्य के परिणाम हैं।
उनको करे ना आतमा जो जानते वे ज्ञानि हैं।।७९।।
निजकृत शुभाशुभ भाव का कर्ता कहा है आतमा।
वे भाव उसके कर्म हैं वेदक है उनका आतमा।।८०।।
जब संक्रमण ना करे कोई द्रव्य पर-गुण-द्रव्य में।
तब करे कैसे परिणमन इक द्रव्य पर-गुण-द्रव्य में।।८१।।
कुछ भी करे ना जीव पुद्गल द्रव्य के गुण-द्रव्य में।
जब उभय का कर्ता नहीं तब किसतरह कर्ता कहें?।।८२।।
बंध का जो हेतु उस परिणाम को लख जीव में।
करम कीने जीव ने बस कह दिया उपचार से।।८३।।
रण में लड़े भट पर कहे जग युद्ध राजा ने किया।
बस उसतरह द्रवकर्म आतम ने किये व्यवहार से।।८४।।
ग्रहे बांधे परिणमावे करे या पैदा करे।
पुद्गल दरव को आतमा व्यवहारनय का कथन है।।८५।।
गुण-दोष उत्पादक कहा ज्यों भूप को व्यवहार से।
त्यों जीव पुद्गल द्रव्य का कर्ता कहा व्यवहार से।।८६।।
जो भाव आतम करे वह उस कर्म का कर्ता बने।
ज्ञानियों के ज्ञानमय अज्ञानि के अज्ञानमय।।८७।।
ज्ञानमय परिणाम से परिणाम हों सब ज्ञानमय।
बस इसलिए सद्ज्ञानियों के भाव हों सब ज्ञानमय।।८८।।
अज्ञानमय परिणाम से परिणाम हों अज्ञानमय।
बस इसलिए अज्ञानियों के भाव हों अज्ञानमय।।८९।।

हे भव्यजन तुम जान लो परमार्थ से यह आतमा।
निजभाव को करता तथा निजभाव को ही भोगता।।९०।।
इसलिए यह शुद्धातमा पर जीव और अजीव से।
कुछ भी ग्रहण करता नहीं कुछ भी नहीं है छोड़ता।।९१।।
चतुर्गति से मुक्त हो यदि चाहते हो सुख सदा।
तो करो निर्मल भाव से निज आतमा की भावना।।९२।।
स्वानुभूति गम्य है जो नियत थिर निजभाव ही।
अपद पद सब छोड़ ग्रह वह नित्य एक स्वभाव ही।।९३।।
ज्ञायकस्वभावी चेतनामय जीव जिनवर ने कहा।
तुम जानना उस जीव को ही कर्म क्षय का हेतु भी।।९४।।
रागादि विरहित आतमा रत आतमा ही धर्म है।
भव तरण-तारण धर्म यह जिनवर कथन का मर्म है।।९५।।
ज्ञान दर्शन मय निजातम को सदा जो ध्यावते।
अत्यल्प काल स्वकाल में वे सर्वकर्म विमुक्त हों।।९६।।
पर का नहीं ना मेरे पर मैं एक ही ज्ञानात्मा।
जो ध्यान में इस भाँति ध्यावे है वही शुद्धात्मा।।९७।।
इसतरह मैं आतमा को ज्ञानमय दर्शनमयी।
ध्रुव अचल अवलंबन रहित इन्द्रियरहित शुध मानता।।९८।।
अरि-मित्रजन धन-धान्य सुख-दुख देह कुछ भी ध्रुव नहीं।
इस जीव के ध्रुव एक ही उपयोगमय यह आतमा।।९९।।
यह जान जो शुद्धात्मा ध्यावें सदा परमातमा।
दुठ मोह की दुर्ग्रन्थि का भेदन करें वे आतमा।।१००।।
निर्वाण पाया इसी मग से श्रमण जिन जिनदेव ने।
निर्वाण अर निर्वाणमग को नमन बारंबार हो।।१०१।।

ह्न•ह्न